International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

Dr .Ramkumar
Assistant Professor
Hindi Dept.Govt. College Mandi Adampur Dist. Hisar Haryana 125052

सार

हिन्दी नाटक के क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ जब स्वाधीनता के बाद पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागिरण का ज्वार देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था। उनके नाटकों ने न सिर्फ नाटक का आस्वाद, तेवर और स्तर ही बदल दिया, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया। उसके पहले, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद जैसे प्रतिभावान रचनाकारों के बावजूद, हिन्दी नाटक अधिकांशत: या तो सस्ते में मनोरंजन का साधन बना हुआ था या फिर नाट्य पुस्तकों की दीवारों के पीछे बन्द था। पचास के दशक में उसे धीरे-धीरे एक अत्यन्त ही समर्थ किन्तु जटिल और परिश्रम तथा प्रशिक्षण-साध्य कला माध्यम के रूप में स्वीकृति मिलना शुरू हुआ, और साथ ही नाट्यकर्मियों से भी अधिक जागरूकता संवेदनशीलता और कलात्मक गंभीरता की अपेक्षा होने लगी। 1958 में संगीत नाटक अकादेमी द्वारा मोहन रोकेश के नाटक आषाढ़ का एक दिन को सर्वश्रेष्ठ नाटक के लिए और कलकत्ते की नाट्यमंडली अनामिका को विनोद रस्तोगी के 'नये हाथ' के सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुतीकरण के लिए पुरस्कारों में इस बदलती हुई स्थिति की ही स्वीकृति थी। उसके बाद से हिन्दी नाटक लगातार आगे बढ़ता रहा है। और सारी सीमाओं के बावजूद उसके क्रमश: हिन्दी के सृजनात्मक साहित्य के क्षेत्र में और देश के नाटक साहित्य में सार्थक स्थान हासिल किया है।

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

भूमिका

मोहन राकेश, हिन्दी जगत के लिए, एक कभी न भुला सकने वाला नाम है। कथात्मक विधा और नाट्य-विधा दोनों पर ही उनकी गहरी और अद्भुत पकड़ थी। उन्होंने "अषाढ़ का एक दिन", "लहरों के राजहंस", "आधे अधूरे" जैसे अपने लोकप्रिय नाटक के कारण संक्षिप्त-से जीवन काल में ही दुर्लभ ख्याति अर्जित की थी। उनकी नाट्यकृतियों से साहित्य तो समृद्ध हुआ ही, भारतीय रंगमंच को भी बहुत-कुछ मिला।

सम्पादक नेमिचन्द्र जैन के अनुसार अरसे से इस बात की ज़रूरत थी, कि मोहन राकेश के सभी नाटकों को एक साथ इस तरह प्रकाशित किया जाए कि वह एक यादगार ग्रंथ बन सके। इस लिहाज से देखें तो यह पुस्तक सचमुच एक "यादगार ग्रंथ" है। हिन्दी में शायद यह पहली बार है कि किसी नाटककार के कृतित्व को इस तरह उसकी समग्रता के साथ पेश किया गया है। नाटककार मोहन राकेश के सभी नाटकों को एक साथ पूरी समग्रता में, इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है। इसमें सभी नाटकों के मूल पाठ, सभी संस्करणों की लेखकीय भूमिकाएँ और सृजन-प्रक्रिया पर प्रकाश डालने वाले उद्धरण राकेश की डायरी से दिये गए हैं। साथ ही इन नाटकों के निर्देशकों, समीक्षकों और कलाकारों के आलेख एवं वक्तव्य हैं। भारत और विदेशों में राकेश के नाटकों की रंगमंचीय प्रस्तुतियों के छायाचित्र इस पुस्तक में एक स्थान पर पहली बार दिए गए हैं।

आधुनिक नाटक साहित्य को नयी दिशा की ओर मोड़ने वाले मोहन राकेश प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार हैं। हिनदी के प्रसिद्ध नाटककार एवं निबन्धकार मोहन राकेश का जन्म 8 जनवरी 1925 ई. को पंजाब के अमृतसर श्ााहर में हुआ था। इनके पिता श्री करमचन्द गुगलानी अधिवक्ता होते हुए भी साहित्य और संगीत के प्रमी थे, जिसका प्रभाव मोहन राकेश के जीवन पर पड़ा। मोहन राकेश ने लाहौर के ओरियण्टल कॉलेज सो शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद न्दिी और संस्कृत विषयों म्ैा एम्ा.ए. किया शिक्षा समाप्ति के अनन्तर इन्होंने अध्यापन का काय्र किया। इन्होंने मुम्बई, शिमला, जालन्धर

तथा दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन किया, परन्प्तु अध्यापन में विशेष रुचि न होने के कारण इन्होंने सन् 1962-63 ई. मेंं मासिक पत्रिका 'सारिका' के सम्पादन का कार्यभर सँभाला। कुछ समय पख्श्चात् इस कार्य को भी छोड़कर इन्होंने स्वतन्त्र लेखन का कार्य प्रारम्भ किया। सन् 1963 से 1972 ई. तक जीवनभर स्वतंत्र लेखन ही इनकी आजीविका का आधार रहा। 'नाटक की भाषा' पर कार्य करने के लिए इन्हें नेहरू फैलोशिप भी प्रदान की गयी, लेकिन असामयिक मृत्यु होने के कारण इस कार्य में व्यवधान पड़ गया। असमय ही 3 दिसम्बर 1972 ई. में दिल्ली में इनका मृत्यु हो गया।

भाषा-प्रयोग में मोहन राकेश सिद्धहस्त है। इनहोंने विषयानुरूप एवं प्रसंगानुकूल सरल, सहज, व्यावहारिक, संस्कृतनिष्ठ एवं परिमार्जित खड़ी बोली का प्रयोग किया है। इनकी भाषा में कहीं-कहीं दैनिक जीवन में प्रयुक्त उर्दू एवं अँग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। इनकी भाासा संजीव रोचक और प्रवाहपूर्ण है।

इनकी रचनाओं में प्रमुखत: वर्णनात्म्क विवरणात्मक भावात्मक तथा चित्रात्मक शैलियों के दर्शन होते हैं। इनके अतिश्रिकत संवाद, सॅक्ति, नाट्य और विवेचानत्मक आदि शैलियों का प्रयोग भी इनकी रचनाओं में मिलता है।

मोहन राकेश एक उत्कृष्ट नाटककार के रूप में प्रसिद्ध हैं, परन्तु इन्होंने साहित्य की अन्य विधाओं- उपन्यास, कहानी, निबध, यात्राबृत्त और आत्मकथा आदि पर भी लेखनी चलायी है। आधनिक गद्य को नवीन दिशा प्रदान करने वाल सहित्यकारों में मोहन राकेश का नाम हिन्दी साहित्य में प्रमुख स्थान रखता है।

मोहन राकेश को कहानी के बाद सफलता नाट्य-लेखन के क्षेत्र में मिली। हिंदी नाटकों में भारतेंदु और प्रसाद के बाद का दौर मोहन राकेश का दौर है जिसें हिंदी नाटकों को फिर से रंगमंच से जोड़ा। हिन्दी नाट्य साहित्य में भारतेन्दु और प्रसाद के बाद यदि लीक से हटकर कोई नाम उभरता है तो मोहन राकेश का। हालाँकि बीच में और भी कई नाम आते हैं जिन्होंने आधुनिक हिन्दी नाटक की विकास-यात्रा में महत्त्वपूर्ण पड़ाव तय किए हैं; किन्तु मोहन राकेश का लेखन एक दूसरे ध्रुवान्त पर नज़र आता है। इसलिए ही नहीं कि उन्होंने अच्छे नाटक लिखे, बल्कि इसलिए भी कि उन्होंने हिन्दी नाटक को अँधेरे बन्द कमरों से बाहर निकाला और उसे युगों के रोमानी ऐन्द्रजालिक सम्मोहक से उबारकर एक नए दौर

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

के साथ जोड़कर दिखाया। वस्तुतः मोहन राकेश के नाटक केवल हिन्दी के नाटक नहीं हैं। वे हिन्दी में लिखे अवश्य गए हैं, किन्तु वे समकालीन भारतीय नाट्य प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। उन्होंने हिन्दी नाटक को पहली बार अखिल भारतीय स्तर ही नहीं प्रदान किया वरन् उसके सदियों के अलग-थलग प्रवाह को विश्व नाटक की एक सामान्य धारा की ओर भी अग्रसर किया। प्रमुख भारतीय निर्देशकों इब्राहीम अलकाजी,ओम शिवपुरी, अरविन्द गौड़, श्यामानन्द जालान, राम गोपाल बजाज और दिनेश ठाकुर ने मोहन राकेश के नाटकों का निर्देशन किया।

मोहन राकेश के दो नाटकों आषाढ़ का एक दिन तथा लहरों के राजहंस में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेने पर भी आधुनिक मनुष्य के अंतर्द्वंद और संशयों की ही गाथा कही गयी है। एक नाटक की पृष्ठभूमि जहां गुप्तकाल है तो दूसरा बौद्धकाल के समय के ऊपर लिखा गया है। आषाढ़ का एक दिन में जहां सफलता और प्रेम में एक को चुनने के द्वन्द से जूझते कालिदास एक रचनाकार और एक आधुनिक मनुष्य के मन की पहेलियों को सामने रखते हैं वहीँ प्रेम में टूटकर भी प्रेम को नही टूटने देनेवाली इस नाटक की नायिका के रूप में हिंदी साहित्य को एक अविस्मरनीय पात्र मिला है। लहरों के राजहंस में और भी जटिल प्रश्नों को उठाते हुए जीवन की सार्थकता, भौतिक जीवन और अध्यात्मिक जीवन के द्वन्द, दूसरों के द्वारा अपने मत को दुनिया पर थोपने का आग्रह जैसे विषय उठाये गए हैं। राकेश के नाटकों को रंगमंच पर मिली शानदार सफलता इस बात का गवाह बनी कि नाटक और रंगमंच के बीच कोई खाई नही है।

आषाढ़ का एक दिन

हिन्दी नाटक की इस यात्रा में 'आषाढ़ का एक दिन' कई प्रकार से एक महत्वपूर्ण पड़ाव तो है ही, इस दौर के नाटक-लेखन की श्रेष्ठतम उपलब्धियों में गिनने योग्य भी है। एक प्रकार से उपेन्द्रनाथ अश्क और

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

जगदीशचन्द्र माथुर ने, विशेषकर जगदीशचन्द्र माथुर ने, नाटक में सहज स्वाभाविकता और नाटकीयता के, यथार्थपरकता और काव्यात्मकता के, जिस मिश्रण का सूत्रपात किया, उसकी महत्त्वपूर्ण परिणति 'आषाढ़ का एक दिन' में हुई है। अवश्य ही 'अंधा युग' इसके पहले लिखा जा चुका था, पर उसका प्रभाव नाटक और रंगमंच पर बहुत कम पड़ा, और पड़ा भी तो कुछ बाद में ही उजागर हुआ-अपने विशेष रूपबंध और शैली के कारण उसका इतना व्यापक होना संभव भी न था।

'आषाढ़ का एक दिन' आषाढ़ का एक दिन की प्रत्यक्ष विषयवस्तु कवि कालिदास के जीवन से संबंधित है। किन्तु मूलत: वह उसके प्रसिद्ध होने के पहले की प्रेयसी का नाटक है-एक सीधी-सादी समर्पित लड़की की नियति का चित्र, जो एक कवि से प्रेम ही नहीं करती, उसे महान होते भी देखना चाहती है। महान वह अवश्य बनता है, पद इसका मूल्य मल्लिका अपना सर्वस्व देकर चुकाती है। अंत में कालिदास भी उसे केवल अपनी सहानुभूति दे पाता है, और चुपके से छोड़कर चले जाने के अतिरिक्त उससे कुछ नहीं बन पड़ता। मल्लिका के लिए कालिदास उसके संपूर्ण व्यक्तित्व के, जीवन में, साथ एकाकार सुदूर स्वप्न की भाँति है; कालिदास के लिए मल्लिका उसके प्रेरणादायक परिवेश का एक अत्यन्त जीवंत तत्व मात्र। अनन्यता और आत्मलिप्तता की इस विसदृशता में पर्याप्त नाटकीयता है, और मोहन रोकेश जिस एकाग्रता, तीव्रता और गहराई के साथ उसे खोजने और व्यक्त करने में सफल हुए हैं वह हिन्दी नाटक के लिए सर्वथा अपरिचित है।

इसके साथ ही समकालीन अनुभव और भी कई आयाम इस नाटक में हैं जो उसे एकाधिक स्तर पर सार्थक और रोचक बनाते हैं। उसका नाटकीय संघर्ष कला और प्रेम, सर्जनशील व्यक्ति और परिवेश, भावना और कर्म, कलाकार और राज्य, आदि कई स्तरों को छूता है। इसी प्रकार काल के आयाम को बड़ी रोचक तीव्रता के साथ प्रस्तुत किया गया है-लगभग एक पात्र के रूप में। मल्लिका और उसके परिवेश की परिणति में तो वह मौजूद है ही, स्वयं कालिदास भी उसके विघटनकारी रूप का अनुभव

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

करता है। अपनी समस्त आत्मलिप्तता के बावजूद उसे लगता है कि अपने परिवेश में टूटकर वह स्वयं भी भीतर कहीं टूट गया है।

'आषाढ़ का एक दिन' में कालिदास का हीन रूप ही दीख पड़ता है, महानता को छूने वाले सूत्र का छोर कहीं नहीं नज़र आता। लेखक उसके भीतर ऐसे तीव्र विरोधी तत्त्वों का कोई संघर्ष भी नहीं दिखा सकता है जो इस क्षुद्रता के साथ-साथ उसकी असाधारण सर्जनशीलता को विश्वसनीय बना सके। कालिदास की यह स्थिति नाटक को किसी-किसी हद तक किसी भी गहराई के साथ व्यंजित नहीं होने देती।

मोहन राकेश की गहरी सूझबूझ और शिल्पकुशलता 'आषाढ़ का एक दिन' के सहायक और अपेक्षाकृत गौण पात्रों की परिकल्पना और रूपायन में दिखाई पड़ती है। कालिदास का प्रतिद्वन्द्वी विलोम वास्तव में उसका विलोम तो है ही, उससे अधिक जीवंत और नाटकीय दृष्टि से अधिक विकसित पात्र भी है। नाटक के कार्य-व्यापार में लगभग विस्फोटक तीव्रता और करुणा उसी की उपस्थिति से पैदा होती है। उसे तथा कथित खलनायक कहकर नहीं उड़ाया जा सकता। विलोम के बिना 'आषाढ़ का एक दिन' और भी भावुकतापूर्ण और बेदह शिथिल नाटक रह जाता है। उसके तर्कों में ही नहीं, उसकी पूरी जीवन दृष्टि में एक ऐसी अकाट्यता और अनिवार्यता है कि उसकी गिनती हिन्दी नाटक के कुछ अविस्मरणीय़ पुरुष पात्रों में होगी। कई प्रकार से विलोम मोहन राकेश की एक अनुपम नाटकीय चरित्र-सृष्टि है।

नाट्यरूप की दृष्टि से 'आषाढ़ का एक दिन' सुगठित यथार्थवादी नाटक है, जिसमें बाह्यय ब्यौरे की बातों से अधिक परिस्थिति के काव्य को अभिव्यक्त करने का प्रयास है। शायद हिन्दी का यह पहला यथार्थवाद नाटक है तो वाह्य और आंतरिक यथार्थ की समन्विति और अंतर्द्वंद्व को संवेदनशीलता के साथ देखता और प्रस्तुत करता है। नाटक में कार्य-व्यापार के संयोजन में गति पर्याप्त तीव्र ही नहीं है, उस तीव्रता के भीतर लय की विविधता भी है; विभिन्न भावों और स्थितियों को, विभिन्न पात्रों को, उस प्रकार आमने-सामने रखा गया है कि वे अपने आप में नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करते हैं और परिवर्ती परिणति को भी यथासंभव अनिवार्य और विश्वसनीय बनाते हैं। फिर भी तीसरे अंक में मल्लिका के स्वागत-भाषण और कालिदास के लंबे एकालाप में गति का संयोजन

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

ठीक नहीं रहता। बल्कि कालिदास का प्रवेश जितना नाटकीय है, उसका परिवर्ती भाषण उतना ही उद्घाटनमूलक होने के कारण तीव्रता को कम करता है। चरम-बिन्दु के इतने समीप पहुँचकर भाषण द्वारा स्थिति का उद्घाटन बहुत अच्छी नाटकीय युक्ति नहीं, विशेषकर जबकि बाक़ी नाटक में राकेश कार्य-व्यापार के द्वारा ही सफलतापूर्वक उद्घाटन करते रहे हैं। पर तीसरे अंक की यही दुर्बलता शीघ्र ही नियंत्रण में आ जाती है और द्वार खटखटाये जाने के बाद से नाटक बड़ी दुर्दम्य और तीव्र गति से चरम परिणति की ओर अनिवार्यतापूर्वक चलता जाता है।

निस्संदेह, हिन्दी नाटक के परिप्रेक्ष्य में, और भाववस्तु और रूपबंध दोनों स्तर पर, 'आषाढ़ का एक दिन ' ऐसा पर्याप्त सघन, तीव्र और भावोद्दीप्त लेखन प्रस्तुत करता है जैसा हिन्दी नाटक में बहुत कम ही हुआ है। उसमें भाव और स्थिति की गहराई में जाने का प्रयास है और पूरा नाटक एक साथ कई स्तरों पर प्रभावकारी है। बिंबों के बड़े प्रभावी नाटकीय प्रयोग के साथ उसमें शब्दों की अपूर्व मितव्ययता भी है और भाषा में ऐसा नाटकीय प्रयोग के साथ-साथ उसमें शब्दों की अपूर्व मितव्ययता भी है और भाषा में ऐसा नाटकीय काव्य है जो हिंदी नाटकीय गद्य के लिए अभूतपूर्व है। एक बात और। हिन्दी के ढेरों तथा कथित ऐतिहासिक नाटकों से 'आषाढ़ का एक दिन' इसलिए मौलिक रूप में भिन्न है कि उसमें अतीत का न तो तथाकथित विवरण है, न पुनरुथानवादी गौरव-गान, और न ही वह द्विजेंद्रलाल राय के नाटकों की शैली में कोई भावुकतापूर्ण अतिनाटकीय स्थितियाँ रचने की कोशिश करता है। उसकी दृष्टि कहीं ज्यादा आधुनिक और सूक्ष्म है जिसके कारण वह सही अर्थ में आधुनिक हिन्दी नाटक की शुरुआत का सूचक है।

लहरों के राजहंस

राकेश का अगला नाटक 'लहरों के राजहंस' कुछ अंशों में 'आषाढ़ के एक दिन' की उपलब्धियों को अधिक सक्षम और गहरा करता है, यद्यपि रूपबंध के स्तर पर उसका तीसरा अंक अधिक दुर्बल है और पर्याप्त स्पष्टता और तीव्रता के साथ अभिव्यंजित नहीं होता। इसमें भी सुदूर अतीत के एक आधार पर

आज के मनुष्य की बेचैनी और अन्तर्द्वन्द्व संप्रेषित है। हर व्यक्ति को अपनी मुक्ति का पथ स्वयं ही तलाश करना है। दूसरों के द्वारा खोजा गया पथ चाहे जितना श्रद्धास्पद हो (जैसा गौतम बुद्ध का), चाहे जितना आकर्षक और मोहक हो (जैसा सुंदरी का) किसी संवेदनशील व्यक्ति का समाधान नहीं कर सकता। इसलिए नाटक के अंत में नंद न केवल बुद्ध द्वारा बलपूर्वक थोपा गया भिक्षुत्व अस्वीकार कर देता है, बल्कि सुंदरी के आत्मसंतुष्ट और छोटे वृत्त में आबद्ध किन्तु आकर्षक जीवन को भी त्यागकर चला जाता है। अपनी मुक्ति का मार्ग उसे स्वयं ही रचना होगा।

इस नाटक में भी राकेश कार्य-व्यापार को दैनंदिनी क्रिया-कलाप से उठाकर एक सार्थक अनुभूति और उसके भीतर किसी अर्थ की खोज के स्तर पर ले जा सके हैं। किन्तु इसकी विषयवस्तु में पर्याप्त सघनता, एकाग्रता और संगति नहीं है। पहला अंक सुंरी पर केन्द्रित जान पड़ता है, जिसमें नन्द एक लुब्ध मुग्ध, किसी हद तक संयोजित और संतुलनयुक्त, पति नात्र लगता है। किन्तु दूसरे अंक से नाचक स्वयं उसके अंत:संघर्ष पर केन्द्रित होने लगता है, यद्यपि अभी इस संघर्ष की रूपरेखा अस्पष्ट है। तीसरे अंक में संघर्श की आकृति तो स्पष्ट होने लगती है, पर वह किसी तीव्रता या गहराई का आयाम प्राप्त करने के बजाय अकस्मात ही नंद और सुंदरी के बीच एक प्रकार की गलतफ़हमी में खो जाता है। दोनों एक दूसरे के संघर्ष का, व्यक्तित्वों के विस्फोट का, सामना नहीं करते और नंद बड़ी विचित्र सी कायरता से चुपचाप घर छोड़कर चला जाता है। उसके इस पलायन की अनिवार्यता नाटक के कार्य व्यापार में नहीं है। बल्कि एक अन्य स्तर पर वह 'आषाढ़ का एक दिन' में कालिदास के भी इसी प्रकार के भाग निकलने की याद दिलाता है। कुल मिलाकर, तीनों अंक अलग-अलग से लगते हैं, जिनमें सामग्रिक अन्विति नहीं अनुभव होती। मगर इस कमी का बावजूद, पहला और दूसरा अंक अत्यन्त सावधानी से गठित और अपने आप मनें अत्यन्त कलापूर्ण है। विशेषकर, दूसरे अंक में, नंद और सुंगरी के बीच दो अलग-अलग सतरों पर चलनेवाले पारस्परिक आकर्षण उद्वेग तथा उसके तनाव की बड़ी सूक्ष्मता, संवेदनशीलता और कुशलता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

निष्कर्ष

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि मोहन राकेश बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने उपन्यास लेखन से अपनी रचना प्रक्रिया प्रारम्भ की। उसके पश्चात् नाटकों की रचना आरंभ की। नाटकों के साथ इन्होंने एकांकी भी लिखे। इन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से नई यथार्थवादी या समस्याप्रधान दृष्टि को तो जीवित रखा ही, उन्हें काव्यत्व एवं साहित्यिकता का नव आयाम एवं उच्च क्षितिज भी प्रदान किया। निश्चय ही नाटककार के रूप में मोहन राकेश की देन अविस्मरणीय है।

सन्दर्भ

1. 'आधे-अधूरे' नाटक - मोहन राकेश
2. 'आधे अधूरे' समीक्षा - प्रो. राजेश शर्मा
3. मोहन राकेश और उनके नाटक - गिरिश रस्तोगी
4. मोहन राकेश और उनका साहित्य - वीरेन्द्र मेंहदीरत्ता
5. मोहन राकेश और उनका रंगकर्म - जयदेव तनेजा